भारत में राष्ट्रीयता के सवाल पर चन्द बातें

I

*"किसी भी **सामाजिक समस्या** की छानबीन करने के मामले में मार्क्सवादी सिद्धान्त की यह अपरिहार्य अपेक्षा होती है कि उस समस्या की छानबीन **निश्चित** ऐतिहासिक सीमाओं के भीतर रखकर की जानी चाहिए, और यदि उस समस्या का संबंध किसी देश विशेष से हो (जैसे किसी देश विशेष का जातीय कार्यक्रम), तो उन विशिष्ट गुणों की ओर समुचित ध्यान दिया जाना चाहिए, जो उसी ऐतिहासिक युग की सीमाओं में उस देश को दूसरे देशों से अलग करते हैं।"* (लेनिन,'जातियों का आत्मनिर्णय का अधिकार,पृष्ठ–9, पैरा–3, खण्ड–4,संकलित रचनायें दस खण्डों में, प्र.प्र. मास्को, जोर मूल में)

भारत में मौजूद राष्ट्रीयता की समस्या को वर्तमान समय में पूरे भारतीय समाज के विशिष्ट गुणों की रोशनी में ही समझा जा सकता है। ये **विशिष्ट** गुण क्या हैं? वर्तमान युग की **खासियत** और **सीमा** क्या है

भारतीय समाज एक अत्यन्त जटिल समाज है। भारतीय समाज के पूंजीवादीकरण की जटिल प्रक्रिया, औपनिवेशक अतीत तथा साम्राज्यवाद से नाभिनालबद्ध होने के चलते इस विशाल आकार व आबादी वाले देश में राष्ट्रीयता की समस्या औपनिवेशिक काल में साम्राज्यवादी पूंजी की पैठ व विस्तार तथा भारतीय पूंजी के जन्म और विकास के साथ पैदा होती है। और प्रत्यक्ष औपनिवेशक शासन से मुक्ति के बाद, भारतीय पूंजीपति वर्ग द्वारा भारत की सत्ता संभालने के बाद यह अपने आपको पूरे आवेग के साथ प्रस्तुत करती है।

सत्ता संभालने के बाद भारतीय पूंजीपति वर्ग ने औपनिवेशिक तंत्र की बुनियाद पर अपने शासन तंत्र की स्थापना की। अपनी राजसत्ता का निर्माण किया। भारतीय पूंजीपति वर्ग ने अपनी सत्ता के निर्माण के दौरान एक तरफ विऔपनिवेशीकरण की प्रक्रिया चलायी तो दूसरी तरफ 570 से अधिक राजे–रजवाड़ों को समाप्त कर अपनी केन्द्रीय सत्ता का निर्माण किया। विऔपनिवेशीकरण की प्रक्रिया के जरिये इसने साम्राज्यवादी बंधनों के बीच अपनी राजनैतिक आजादी सुनिश्चित की तो सामंती राजे–रजवाड़ों का भारतीय राज्य में विलय करके अपने राजनैतिक आधार का विस्तार किया। इन दोनों ही प्रक्रियाओं से भारतीय पूंजीपति वर्ग ने अपनी गृहमंडी को सुदृढ़ किया।

भारतीय नवोदित शासक वर्ग ने अपने गृहमंडी के विस्तार के लिए भारतीय सत्ता को संभालते ही आक्रामक नीति अपनायी। कश्मीर, मणिपुर, नागालैण्ड, बाद के समय में सिक्किम, को जबरदस्ती अपने कब्जे में लिया तथा स्थानीय आबादी की इच्छा व आंकाक्षा के विरुद्ध भारतीय राज्य में इनका विलय कर दिया।

भारत एक बहुराष्ट्रीय देश है। भारत में तमाम राष्ट्रीयतायें विकास के भिन्न स्तरों पर खड़ी हैं। ऐतिहासिक विकास के विभिन्न सोपानों में खड़ी इन राष्ट्रीयताओं में से कई उत्पीड़ित राष्ट्रीयतायें हैं। इन उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं की कई विशिष्ट समस्याएं बनती हैं। ये कुल मिलाकर, भारत में राष्ट्रीयता की समस्या को जटिल बना देती हैं।

भारत की राष्ट्रीयता की समस्या का एक विशिष्ट गुण यह है कि यहां कोई ऐसी राष्ट्रीयता नहीं बनती है जो कि अन्य राष्ट्रीयताओं का दमन–उत्पीड़न करती हो। भारतीय सत्ता के द्वारा भारतीय पूंजीपति वर्ग ही यह कार्य करता है।

भारतीय पूंजीपति वर्ग का अखिल भारतीय चरित्र है तथा इसका सर्वभारतीय आधार है। भारतीय पूंजीपति वर्ग का निर्माण विभिन्न राष्ट्रीयताओं से मिलकर हुआ है। भारतीय राजसत्ता किसी एक राष्ट्रीयता के पूंजीपति वर्ग की सत्ता न होकर, इस अखिल भारतीय चरित्र वाले पूंजीपति वर्ग की राजसत्ता है।

भारतीय राजसत्ता के साथ उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं का अन्तरविरोध है। यह अन्तरविरोध भारत के प्रमुख अन्तरविरोधों में से एक है। भारत की राजसत्ता उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं को अपनी सीमाओं में बांधने के लिए घोर दमन का सहारा लेती रही है। पूंजीवाद के विकास के साथ वर्ग विभेदीकरण की प्रक्रिया भी चली है जिसने उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं में पूंजीपति वर्ग को जन्म दिया है जिसे भारतीय पूंजीपति वर्ग ने कमोबेश आत्मसात कर लिया है। आत्मसातीकरण की प्रक्रिया के तहत इस तरह से भारत के पूंजीपति वर्ग ने अपने आधार को व्यापक किया है।

भारत में आज चल रहे राष्ट्रीयता के आन्दोलनों का नेतृत्व मुख्य तौर पर पेटी बुर्जुआ तत्वों के हाथ में है। छात्र, युवा, सरकारी कर्मचारी, शिक्षक, छोटे व्यापारी, मध्यम व छोटे किसानों के मध्य ही इन आन्दोलनों का मुख्य आधार है तथा इनके बीच से ही इन आन्दोलनों का नेतृत्व आमतौर पर आता रहा है। सर्वहारा वर्ग इन आन्दोलनों का या तो पिछलग्गू रहा है या फिर अलग–थलग खड़ा रहा है। इन आंदोलनों का आधार व नेतृत्व निम्न पूंजीवादी प्रवृत्तियों का शिकार रहा है। कभी अपनी प्रवृत्तियों तो कभी भारतीय शासक वर्ग के षड्यंत्र का शिकार होकर, इन उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के क्षुब्ध तत्व दूसरी राष्ट्रीयताओं के मजदूरों तथा अन्य लोगों की हत्यायें करते रहे हैं। हाल के वर्षों में असम, त्रिपुरा व मणिपुर में ऐसी घटनायें घटी हैं। निम्न पूंजीवादी तत्वों के नेतृत्व में चलने वाले आन्दोलनों का यह अन्तर्निहित गुण होता है कि वे अक्सर अन्य राष्ट्रीयताओं के प्रति पूर्वाग्रहित, शंकालु, असहिष्णु होने के अलावा कई दफा मतान्ध होते हैं।

विभिन्न राष्ट्रीयताओं के मध्य आपसी संघर्ष उत्तर–पूर्वी राज्यों में कई दफा हुए हैं। भारतीय शासक वर्ग की भूमिका के चलते ये संघर्ष जटिल होते जाते हैं। भारतीय शासक वर्ग अपने एजेण्टों के जरिये लोकप्रिय जन आन्दोलनों में फूट डलवाता रहा है। व्यापक जन आधार वाले सशस्त्र संगठनों के खिलाफ फर्जी संगठन व पतित तत्वों को खड़ा करना, उनके द्वारा दूसरी राष्ट्रीयताओं के आम नागरिकों की हत्या

कर के मतभेद भड़काना या अपने ही एजेण्टों से समझौते करने जैसी कार्यवाहियां भारतीय शासक वर्ग करता रहा है।

अपने वर्गीय व प्रतिक्रियावादी चरित्र के चलते कई प्रभावी राष्ट्रीयताओं के बुर्जुआ व निम्न बुर्जुआ तत्व अपनी संस्कृति व भाषा को उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं, उप राष्ट्रीयताओं तथा भाषायी–सांस्कृतिक समूहों पर थोपकर उनका उत्पीड़न करते हैं तथा उनके विकास में बाधा खड़ी करते हैं। असम में यह परिघटना पिछले दशकों में काफी घटी है। असम से नये प्रांतो के गठन में, इस कारक ने प्रमुख भूमिका निभायी है। बंगाल में गोरखाओं के साथ भी ऐसा ही हुआ है। ऐसे ही कई अन्य उदाहरण दिये जा सकते हैं।

भारतीय शासकों ने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों की नीति की तरह ही जनवादी आकांक्षाओं की दमन नीति को अपनाया। नागा आबादी के आत्मनिर्णय के अधिकार को अस्वीकारने के साथ ही पूरी आबादी को कई राज्यों में बांट दिया गया। नागालैण्ड के अलावा नागा आबादी असम, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर में रह रही है तथा आबादी का एक बड़ा हिस्सा पड़ोसी देश म्यांमार में भी रह रहा है। नागा राष्ट्रीयता जब एकीकरण की मांग करती है तो भारतीय शासक वर्ग के साथ पड़ोसी राज्य की आबादी भी अपनी भौगोलिक सीमा में किसी भी परिवर्तन के 'षड़यंत्र' के खिलाफ सड़कों पर उतर आती है। कुछ वर्ष पहले मणिपुर की जनता ने नागा संगठनों के साथ भारत सरकार के 'सीज फायर' की सीमा को मणिपुर के पर्वतीय जिलों में लागू किये जाने का विरोध किया था। 1991 की जनगणना के अनुसार कुल नागा आबादी 14,58,097 थी जिसमें से अरूणांचल में 78,282, असम में 15,354, मणिपुर में 3,34,085 तथा नागालैंड में 10,29,587 तथा शेष अन्य राज्यों में रह रहे थे। यही हालत कूकी जनजाति की भी है। 1991 की जनगणना के अनुसार कुल कूकी आबादी 2,05,736 थी जिसमें से असम में 21,883, मणिपुर में 1,21,994, मिजोरम में 31,077, नागालैण्ड में 16,100, त्रिपुरा में 10,628, मेघालय में 4,054 रह रहे थे। नागा और कूकी जनजाति की तरह कई अन्य जनजातियां जो राष्ट्रीयता के स्तर पर विकसित हो रही हैं, ऐसे ही बिखराव की शिकार हैं।

भारत में राष्ट्रीयतायें विकास तथा प्रभाव के विभिन्न स्तरों पर खड़ी हैं। अपने विकास के स्तर, भारतीय राजसत्ता से सम्बंध, अर्थव्यवस्था में हैसियत से इन्हें मोटे तौर पर अलग–अलग श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। भारतीय समाज की जटिलता तथा श्रेणियों में विभाजित करने की पद्धति की सीमा के चलते, यह विभाजन यद्यपि बहुत सटीक नहीं है तथापि इस समस्या को समझने में मदद करता है।

पहली श्रेणी, उन राष्ट्रीयताओं की बनती है जो सुविकसित तथा सुगठित हैं। केन्द्र तथा प्रान्त के सम्बंधों में ये मुखरता से अधिक अधिकारों की मांग करते रहते हैं। इस श्रेणी की राष्ट्रीयताओं की निश्चित भौगोलिक सीमायें बनती हैं। इनकी भाषा व साहित्य परिष्कृत व समृद्ध हैं। पंजाबी, बंगाली, मराठी, तमिल,तेलगू, कन्नड़, मलयाली, उड़िया आदि इस श्रेणी में आती हैं।

दूसरी श्रेणी, उन राष्ट्रीयताओं की बनती है जो विकसित हैं परन्तु भारतीय राजसत्ता के घोर उत्पीड़न की शिकार हैं। आज के समय में इनमें से अधिकांश में जुझारू आंदोलन चल रहे हैं। भारतीय राजसत्ता ने इन सभी क्षेत्रों को 'डिस्टर्ब एरिया' घोषित कर आर्म्स फोर्सेस स्पेशल पावर एक्ट (AFSPA)

लागू किया हुआ है। इन क्षेत्रों में नागरिकों के उन जनवादी अधिकारों को भी निलम्बित किया हुआ है जो देश के अन्य स्थानों पर नागरिकों को औपचारिक तौर पर हासिल हैं। कश्मीरी, नागा, मणिपुरी, असमी, मिजो, त्रिपुरी इस श्रेणी में आते हैं। इन सभी इलाकों में निम्न बुर्जुआ तत्वों के नेतृत्व में भारतीय शासक वर्ग के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष भी समय–समय पर चलते रहते हैं। सशस्त्र संगठन कई दफा व्यापक जन आधार हासिल कर लेते हैं। इन संगठनों के बनने–बिगड़ने की प्रक्रिया भी चलती रहती है।

तीसरी श्रेणी, अल्प या अर्द्ध विकसित राष्ट्रीयताओं की बनती है। ये अक्सर दोहरे उत्पीड़न की शिकार हैं। भारतीय राजसत्ता के साथ स्थानीय विकसित राष्ट्रीयताओं की प्रान्तीय सरकारें भी इनका दमन–उत्पीड़न करती हैं। बोडो, कामतापुरी, गोरखा, कूकी आदि इसी श्रेणी के हिस्से हैं। ये विकास की जटिल प्रक्रिया से गुजर रही हैं।

चौथी श्रेणी, मोटे तौर पर हिन्दी भाषी क्षेत्र की बनती है। यह विशाल भौगोलिक क्षेत्र में फैली हुई हैं। भारत में हिन्दी राष्ट्रीयता जैसी कोई चीज नहीं बनती है। इस श्रेणी के मोटे तौर पर दो उपसमूह बनते हैं। पहला उपसमूह उनका बनता है जो आज अलग भौगोलिक इकाई, प्रान्त के रूप में गठित हो चुके हैं। इन प्रान्तों में विशिष्ट बोलियां बोली जाती हैं (तथा कई किस्म की सांस्कृतिक भिन्नता भी मौजूद हैं) परन्तु मोटे तौर पर ये हिन्दी भाषा के ही आज उप हिस्से बनते हैं। इन प्रांतों के देहाती इलाकों में इन बोलियों का ही वर्चस्व है। इन प्रांतों में शिक्षा व सरकारी कामकाज की भाषा हिन्दी ही है। झारखण्ड, उत्तराखण्ड, छत्तीसगढ़, हिमांचल, हरियाणा ऐसे ही प्रांत हैं। इस उपसमूह में भी पर्याप्त भिन्नतायें मौजूद हैं। इनमें छत्तीसगढ़ तथा झारखण्ड एक तरह के तथा शेष दूसरी तरह के बनते हैं। झारखण्ड तथा छत्तीसगढ़ आदिवासी बहुल इलाके रहे हैं तथा उनके अलग राज्य के संघर्ष में यह प्रमुख तत्व रहा है। प्राकृतिक खनिज सम्पदाओं से भरपूर ये दोनों ही राज्य कोयले, लोहे तथा खनिज पदार्थों के मामलों में भारतीय शासक वर्ग के प्रमुख स्रोत स्थल हैं।

दूसरा उपसमूह, मूलतः भाषायी उपसमूह है। भोजपुरी, मैथिली, अवधी, बुंदेलखण्डी आदि ऐसे उपसमूह के हिस्से बनते हैं। इस उपसमूह की बोलियों/उपभाषा (जैसे अवधी, भोजपुरी) को बोलने वालों की विशाल संख्या है तथा इनका हिन्दी भाषा के साहित्य को समृद्ध करने में विशिष्ट योगदान है।

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश राजस्थान और यहां तक कि बिहार भी एक हद तक भारतीय राजव्यवस्था में प्रशासनिक इकाइयां भर हैं। ये प्रांत हिन्दी भाषा समूह के उपसमूहों/बोलियों के सम्मिश्रण (amalgam) हैं। साथ ही इन सभी प्रान्तों में विभिन्न जनजातियां भी निवास करती हैं। इनकी विशिष्ट बोलियां है जो कई भिन्न भाषा–परिवारों से जुड़ी हुई हैं। आत्मसातीकरण की प्रक्रिया तथा पूंजीवादी समाज की निर्ममता के चलते ये उपेक्षित तत्व किसी सुगठित समूह के रूप में विकसित नहीं हो पाये हैं। बिखराव व फैलाव भी इसमें योगदान देता है। गोंड जनजाति कई प्रांतों में फैली हुई ऐसी ही एक जनजाति है।

हिन्दी भाषा वाले समूह क्षेत्र में एक व्यापक आबादी उर्दू भाषियों की रही है। हिन्दी और उर्दू, हिन्दी क्षेत्र की विभिन्न उप भाषाओं–बोलियों से निर्मित हुई हैं। ये अपने जन्म के समय लिंकिंग–लेंग्वेज के रूप में पैदा हुयीं। इन दोनों भाषाओं की साझी उत्पत्ति तथा साझा इतिहास है तथा यहां तक कि ये अपनी बुनावट में एक ही हैं। औपनिवेशिक काल में इन्हें अलग करके साम्प्रदायिक रंग चढ़ा दिया गया। देवनागरी लिपि

वाली संस्कृतनिष्ठ भाषा को हिन्दी तथा मूलतः अरबी लिपि वाली भाषा को उर्दू (इसमें फारसी भाषा के तत्व भी शामिल हैं) मानते हुए, हिन्दू और मुस्लिम रंग दे दिया गया। अपने औपनिवेशिक हितों के कारण ब्रिटिश शासकों तथा उसके बाद भारतीय शासकों ने अपने हितों के कारण समय–समय पर इसमें खूब साम्प्रदायिक रंग भरा। भारत–पाकिस्तान के विभाजन के समय और बाद में हिन्दू–मुस्लिम क ट्टरपंथियों और विशेषकर संघियों ने अपने घृणित प्रतिक्रियावादी उद्देश्यों के लिए इसका इस्तेमाल किया।

कुल मिलाकर, ये श्रेणियां–उपश्रेणियां भारत में राष्ट्रीयता की समस्या की जटिलता को प्रस्तुत करती हैं।

भारतीय राजसत्ता और राष्ट्रीयताओं के अन्तरविरोध की अन्य अभिव्यक्ति, केन्द्र–प्रांतों के सम्बंधों के विवादों के रूप में, समय–समय पर होती रहती हैं।

केन्द्र–प्रांत संबंधों में तनाव 'भारतीय संघ' के निर्माण के समय से ही है। 'भारतीय संघ' सीमित अधिकार व स्वायत्तता वाले प्रांतों से मिलकर बना है जिसमें केन्द्र की भूमिका सर्वोपरि है। सभी मूल विषय और अधिकार केन्द्र के पास होने के कारण 'भारतीय संघ' वास्तव में प्रांतों या राष्ट्रीयताओं का संघ न होकर एक केन्द्रीकृत ढांचे के भीतर कुछ ऐसी प्रशासनिक इकाइयां हैं जिन्हें कुछ सांस्कृतिक स्वायत्तता भर हासिल है। राजनैतिक और आर्थिक तौर पर केन्द्र इन्हें सीमित अधिकार और अवसर ही देता है।

केन्द्र–प्रान्त सम्बंधों में विवाद, मूलतः वर्गीय प्रकृति व स्वरूप में, शासक वर्ग के आपसी अन्तरविरोधों को ही अभिव्यक्त करते हैं। इनकी प्रकृति इजारेदार–गैर इजारेदार पूंजीपति, इजारेदार–क्षेत्रीय पूंजीपति, उद्योगपति–व्यापारी–धनी किसान, शहर–देहात इत्यादि की होती है।

विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों का उदय और विकास तथा नब्बे के दशक में विशेषकर इनकी बढ़ती हुई भूमिका ने केन्द्र–प्रांत सम्बंधों में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन ला दिये हैं। नब्बे के दशक के पहले भी, क्षेत्रीय/प्रान्तीय/राष्ट्रीयता के आन्दोलनों में शासक वर्ग या पूंजीपति वर्ग के सदस्य निम्न बुर्जुआ तत्वों तथा किसान आबादी को गोलबंद कर केंद्र पर दबाव बनाते रहे हैं तथा इस दबाव का लाभ उठाकर केन्द्र से कुछ रियायतें हासिल करते रहे हैं। नब्बे के दशक तथा उसके बाद के वर्षों में केन्द्रीय सरकार के गठन में क्षेत्रीय दलों की भूमिका और महत्व बढ़ा है। इससे इन क्षेत्रीय/प्रांतीय दलों की यह स्थिति बनी है कि वे केन्द्र में अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय हो सकते हैं तथा दबाव पैदा कर सकते हैं। यद्यपि इस सबसे 'संघीय ढांचे' में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं आया है। बस पहले की अपेक्षा केन्द्र का वर्चस्व थोड़ा कम हुआ है।

II

भारत में राष्ट्रीयता के सन्दर्भ में सर्वाधिक महत्वपूर्ण सवाल यह बनता है कि भारत में विभिन्न राष्ट्रीयताओं का दमन–उत्पीड़न कौन और क्यों करता है। यह एक सामान्य प्रस्थापना प्रस्तुत की जाती रही है कि 'भारत राष्ट्रीयताओं की जेल' है। सवाल उठता है कि किसने और क्यों यह जेल कायम की हुई है।

जैसा कि हम पहले कह आये हैं कि भारत में कोई ऐसी राष्ट्रीयता नहीं बनती है जो अन्य राष्ट्रीयताओं का उत्पीड़न–दमन करती हो। अपनी भाषा–संस्कृति अन्य राष्ट्रीयताओं पर थोपती हो।

भारत का शासक वर्ग अपनी राजसत्ता के मार्फत देश की तमाम राष्ट्रीयताओं का दमन–उत्पीड़न करता है। भारतीय समाज में भारतीय राजसत्ता व उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं का अन्तरविरोध, प्रमुख अन्तरविरोधों में से है। भारतीय समाज की यह विशिष्ट स्थिति कि यहां पर उत्पीड़ित राष्ट्रीयतायें तो हैं परन्तु कोई उत्पीड़क राष्ट्रीयता नहीं है, यहां कि राष्ट्रीयता की समस्या को दुनिया में अपवादिक श्रेणी में रख देती है।

इसकी जड़ें भारतीय समाज के औपनिवेशिक अतीत में छिपी हुई हैं। भारत के वर्तमान शासक पूंजीपति वर्ग का जन्म व विकास औपनिवेशिक काल में हुआ था। अपने जन्म के साथ ही इस वर्ग का औपनिवेशिक सत्ता तथा ब्रिटिश पूंजी से एक अन्तरविरोध बना। ब्रिटिश पूंजी तथा सत्ता, निरन्तर भारतीय पूंजीपति वर्ग के विकास में बाधायें खड़ी करती थी। इसने भारतीय पूंजी के देशव्यापी प्रतिरोध व संघर्ष को जन्म दिया। संघर्ष की जरूरत और विकास के दौरान पूंजीपति वर्ग के पहले क्षेत्रीय पैमाने पर फिर इनके समुच्चय से अखिल भारतीय स्तर पर आर्थिक व राजनैतिक संगठन पैदा हुए। आई.सी.सी, फिक्की तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ऐसे ही अखिल भारतीय संगठन थे।

व्यापारियों, उद्योगपतियों, नौकरशाहों व भूस्वामियों से निर्मित यह वर्ग अपने दर्शन व दृष्टिकोण में, अपने औपनिवेशिक आकाओं की प्रतिछाया था। इस प्रतिछाया वाले वर्ग ने शनैः शनैः वास्तविक आकार ग्रहण कर, भारतीय जनता के जुझारू संघर्षों के दबाव तथा विशेष वैश्विक परिस्थिति में एक समझौते के तहत सत्ता प्राप्त कर ली।

सत्ता प्राप्त करने के बाद, इस वर्ग ने अपना सुदृढ़ीकरण और विस्तार किया। इस प्रक्रिया को इसने कई तरह से सम्पादित किया और यह प्रक्रिया लम्बे समय तक जारी रही। कुछ हद तक यह आज भी जारी है।

विऔपनिवेशीकरण, आत्मसातीकरण, संरक्षणवादी आर्थिक नीतियां आदि इसी प्रक्रिया के हिस्से थे। अपनी भौगोलिक सीमाओं के विस्तार के लिए इसने कश्मीर, नागा, मणिपुर आदि राष्ट्रीयताओं का, अपने राज्य में जबरदस्ती विलय कर दिया।

पुराने वर्ग–जमींदार, सामंती भूस्वामियों, राजा–महाराजाओं के अधिकांश को इसने क्रमशः अपने में आत्मसात कर लिया। इस पुराने वर्ग पर लगातार दबाव बनाया तथा उन्हें इस बात के अवसर प्रदान किये कि वे अपने आपको पूंजीपति वर्ग में तबदील करें तथा उसके विश्व दृष्टिकोण को अपनाये।

प्रशियाई पथ का अनुसरण करते हुये उसने कृषि में भूमि सुधार किये और उसके पूंजीवादीकरण का मार्ग प्रशस्त किया। जमींदारी उन्मूलन, तमाम किस्म के कृषि व भूमि सुधार, इस प्रक्रिया में शामिल रहे हैं।

पचास, साठ तथा सत्तर के दशक में आर्थिक संरक्षणवादी नीतियां अपनाकर एक देशव्यापी गृहमंडी का विकास किया। साथ ही विस्तारवादी नीतियां अपनाकर इस गृहमंडी का विस्तार किया।

भारतीय समाज में पूंजीवाद के क्रमशः विकास ने राष्ट्रीयताओं के संदर्भ में दो तरह की गतियों को जन्म दिया। पहली गति के परिणामस्वरूप जनवादी आंकाक्षाओं का जन्म व विकास हुआ। राष्ट्रीयता की

पहचान के मूल तत्वों का विकास हुआ तथा स्थानीय आबादी या एक भाषा बोलने वालों के बीच अलगाव कम हुआ। उनका पार्थक्य टूटकर ज्यादा सुगठित समूह या राष्ट्रीयता का विकास हुआ। उद्योग, संचार, रेल–सड़कों, शिक्षा के प्रचार–प्रसार आदि ने इसमें अपनी भूमिका निभायी। पूंजीवादी विकास की चारित्रिक विशेषताओं में एक, उसकी असमान प्रकृति है। पूंजीवादी विकास की असमान गति ने कुछ क्षेत्रों का विकास किया तथा इसी असमान विकास ने अवरुद्ध क्षेत्रों में स्वाभाविक क्षोभ व आक्रोश को जन्म दिया। विभिन्न उभरती राष्ट्रीयताओं के पेटी–बुर्जुआ तत्वों में इस जनवादी आकांक्षा ने जन्म लेना शुरू किया कि एक अलग राष्ट्र–राज्य का निर्माण करके, वे भारतीय शासक वर्ग के शोषण–उत्पीड़न से मुक्त हो सकते हैं। कुल मिलाकर कहा जाय तो पूंजीवाद के क्रमशः विकास ने आत्मनिर्णय के अधिकार की भौतिक जमीन तैयार की।

दूसरी गति के परिणामस्वरूप विभिन्न राष्ट्रीयताओं, उपराष्ट्रीयताओं, भाषायी तथा नृ–जातीय समूहों के बीच आपसी एकीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है। पार्थक्य के टूटने तथा वर्ग विभेदीकरण की प्रक्रिया के कारण अखिल भारतीय पूंजीपति वर्ग के साथ अखिल भारतीय सर्वहारा वर्ग भी निर्मित हुआ और तेजी से इस वर्ग – सर्वहारा वर्ग – का विकास हुआ।

इक्कीसवीं सदी के आते–आते आज स्थिति यहां पहुंच गयी है कि सर्वहारा वर्ग भारत का सबसे बड़ा वर्ग बन गया है। किसान प्रधान देश से भारत सर्वहारा प्रधान देश बन गया है। पूंजीवादी विकास के साथ सर्वहारा आबादी की गतिशीलता (mobility) तथा स्थानान्तरण तीव्र हुआ है। इस सबने अखिल भारतीय स्तर पर सर्वहारा वर्ग के संगठित होने तथा भावी समाजवादी समान की पूर्व–पीठिका तैयार की है।

आज भारत में राष्ट्रीयताओं के उत्पीड़न की मुक्ति का सवाल सर्वहारा क्रांति – समाजवादी क्रांति – से जुड़ा हुआ है। भारत में राष्ट्रीयताओं के उत्पीड़क वर्ग की सत्ता को एक सर्वहारा क्रांति के द्वारा ही उखाड़ा जा सकता है और यह क्रांति ही राष्ट्रीयताओं के उत्पीड़न को समाप्त कर सकती है।

भारतीय समाज में पूंजी ने शनैः शनैः सभी प्राक् पूंजीवादी संरचनाओं को अपने आगोश में ले लिया है। पूंजीवादी विकास की यह खासियत होती है कि वह असंतुलित व असमान होता है। इन दोनों ही प्रक्रियाओं के कारण जहां पूंजी प्रत्येक क्षेत्र में प्रवेश कर जाती है वहीं वह किन्हीं क्षेत्रों का अत्यधिक तो किन्हीं क्षेत्रों का अत्यल्प विकास करती है। क्षेत्रीय विकास की असमानता भारत के विभिन्न क्षेत्रों में एकदम से दिखायी देती है। गुजरात–हरियाणा–पंजाब पूंजीवादी दृष्टि से विकसित हैं तो बिहार–उड़ीसा और उत्तर–पूर्व के राज्य पिछड़े हुए हैं। भारत का शासक वर्ग अपने वर्गीय हितों के लिए सभी राज्यों के प्राकृतिक संसाधनों का जबरदस्त दोहन करता है। झारखण्ड, छत्तीसगढ़, बिहार, गोआ, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान खनिज सम्पदा (लोहा, तांबा, बॉक्साइट, अभ्रक, संगमरमर, कोयला, इत्यादि) के प्रमुख स्रोत स्थल हैं। कोयले के मुख्य भण्डार झारखण्ड (32.8%), उड़ीसा(22.7%), पश्चिमी बंगाल (17%), छत्तीसगढ़ व मध्य प्रदेश (11.4%) में है। तेल व पेट्रोलियम गैस के मुख्य क्षेत्र असम, गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उड़ीसा में है। लौह अयस्क के मुख्य क्षेत्र झारखण्ड, गोआ, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, मध्य

प्रदेश, कर्नाटक में स्थित हैं। जलविद्युत के प्रमुख क्षेत्र महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, उत्तराचंल, हिमांचल, जम्मू व कश्मीर, पंजाब में हैं।

भारत में राष्ट्रीयता के संघर्ष अधिकांशतः उन क्षेत्रों में मुखर हैं जो पूंजीवादी विकास के मामले में पिछड़े हुए हैं। इन में से कई क्षेत्रों का आर्थिक व राजनैतिक एकीकरण भारत की मुख्य भूमि से, अपेक्षाकृत कम हुआ है। कश्मीर तथा उत्तर–पूर्व के अधिकांश राज्यों का ऐतिहासिक रूप से मुख्य भूमि से जुड़ाव नहीं रहा है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों के द्वारा निर्धारित भौगोलिक सीमाओं को ही भारतीय शासक वर्ग अपनी सीमाओं के रूप में मानता रहा है। अपने वर्गीय हितों के लिए इसका ऐसा करना स्वाभाविक भी है।

जिन क्षेत्रों में राष्ट्रीयता के संघर्ष मुखर हैं, देश में अन्य कई क्षेत्रों से, पूंजीवादी विकास की दृष्टि से पिछड़े होने के बावजूद उनका पूंजीवादी विकास हुआ है। उत्तर–पूर्व के राज्यों में भी अलग–अलग क्षेत्रों की स्थिति भी अलग–अलग है। असम, त्रिपुरा, मणिपुर की घाटियों में कृषि का पूंजीवादीकरण अधिक हुआ है। इन क्षेत्रों का सीमित ही सही, औद्योगीकरण हुआ है। विभेदीकरण की प्रक्रिया के चलते बुर्जुआ वर्ग, निम्न बुर्जुआ वर्ग के साथ सर्वहारा आबादी पैदा हुई है तथा सर्वहारा आबादी का आकार पिछले कुछ दशकों में अधिक बढ़ा है। इन इलाकों में सदियों से बसी हुई कबीलाई (जतपइंस) आबादी आधुनिक समाजीकरण की प्रक्रियाओं के चलते सीधे पूंजीवादी समाज में खींच ली गयी है। उनकी परम्परागत जीवन–शैली, कृषि–कर्म में जबरदस्त बदलाव आ गये हैं। शिक्षा के प्रचार ने भी अस्मिता बोध में बड़ी भूमिका निभायी है। मिजोरम, नागालैण्ड, मणिपुर की साक्षरता पर भारत की औसत राष्ट्रीय साक्षरता दर से काफी ऊपर है। उत्तर पूर्व के इन राज्यों के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में पिछले दो दशकों में आठ से लेकर दस गुने तक की वृद्धि हुई है। इन राज्यों में से कई में पिछले एक दशक में शहरी आबादी में तेज वृद्धि हुई है। अखिल–भारतीय शहरी आबादी में वृद्धि दर जहां 1991-2001 में 31.2% रही है वहीं यह वृद्धि दर नागालैंड में 100%, मिजोरम में 33.3%, मेघालय में 66.7%, अरूणांचल में 100%, त्रिपुरा में 25%, मणिपुर में 20ः्ए जम्मू व कश्मीर में 38.9% रही है।

भारतीय शासक वर्ग इन राज्यों के प्राकृतिक संसाधनों का जबरदस्त दोहन करता है। प्राकृतिक संसाधनों के स्रोत के साथ–साथ ये राज्य भारतीय पूंजीपति वर्ग के राष्ट्रीय बाजार के हिस्से हैं। भारतीय शासक वर्ग के लिए इन राज्यों का राजनैतिक व सामाजिक दृष्टि से भू–राजनीतिक महत्व भी बहुत ज्यादा है।

असम में भारत के प्रमुख तेल क्षेत्र स्थित हैं। असम का तेल उत्पादन में, भारत में तीसरा स्थान है। असम में डिगबोई, नाहरकटिया तथा सुरमाघाटी में प्रमुख खनिज तेल भंडार हैं। अरूणांचल प्रदेश तथा नागालैंड में भी खनिज तेल की खोज हुई हैं। असम में प्राकृतिक गैस के भी विशाल भंडार हैं। हाल के वर्षों में त्रिपुरा मे प्राकृतिक गैस के भंडार मिले हैं। असम, मेघालय तथा अरूणांचल प्रदेश में टरशियरी युगीन कोयले (इसे टरशियरी कोयला कहा जाता है, यह मध्यम श्रेणी का कोयला है) के भंडार मिले हैं। सिक्किम, जम्मू व कश्मीर और मणिपुर में तांबा भी पाया जाता है। जम्मू व कश्मीर में बाक्साइट के भी कुछ भण्डार हैं। इन खनिज पदार्थों के अतिरिक्त जम्मू व कश्मीर तथा उत्तर–पूर्व के राज्य जल विद्युत उत्पादन की दृष्टि से समृद्ध क्षेत्र हैं। इन सभी राज्यों में वन सम्पदा के विशाल क्षेत्र हैं। असम में भारत के मुख्य

चाय बागान स्थित हैं। असम देश में 53% से अधिक चाय का उत्पादन करता है। (गौरतलब है कि दुनिया में भारत का चाय उत्पादन में प्रथम स्थान है। भारत विश्व की लगभग 28% चाय का उत्पादन करता है। यह भारत की प्रमुख निर्यातक वस्तु है तथा चाय उद्योग में दस लाख से अधिक व्यक्ति कार्यरत हैं)।

उत्तर–पूर्व के सभी राज्य तथा जम्मू व कश्मीर का भारतीय शासकों के लिए भू–राजनैतिक महत्व के क्षेत्र हैं। पिछले कुछ वर्षों में मणिपुर, त्रिपुरा जैसे राज्यों को म्यांमार, थाइलैंड जैसे आसियान के देशों के अलावा बांग्लादेश के बाजारों में पहुंच बनाने के लिए प्रमुख थल मार्ग के रूप में देखा जाने लगा है। भारतीय शासकों की चीनी शासकों से तीखी प्रतिद्वन्द्विता के कारण आसियान के देशों का महत्व बढ़ जाता है और उत्तर–पूर्व के राज्य सामरिक महत्व के साथ आर्थिक व व्यापारिक महत्व के क्षेत्र बन रहे हैं। पाकिस्तान, चीन तथा मध्य एशिया के देशों के लिए जम्मू व कश्मीर का भू–राजनैतिक महत्व बढ़ जाता है। जम्मू व कश्मीर सहित उत्तरपूर्व के राज्यों में दशकों से जारी भारतीय सेना का दमन व उत्पीड़न को इस रोशनी में देखकर समझा जा सकता है कि क्यों भारतीय शासक वर्ग किसी भी हद तक जाकर इन क्षेत्रों को अपने कब्जे में रखना चाहता है।

भारत के शासक वर्ग तथा हिन्दी भाषी क्षेत्र में एक विशिष्ट सम्बन्ध है। मुख्यतः यह हिन्दी भाषी क्षेत्र (इस संदर्भ में इसमें प्रमुख महानगर तथा गुजरात, पंजाब, महाराष्ट्र जैसे क्षेत्र भी शामिल किये जा सकते हैं) भारतीय शासक वर्ग की नीतियों को सामाजिक स्वीकार्यता प्रदान करते हैं। भारतीय शासक वर्ग की विस्तारवादी नीतियों तथा राष्ट्रीयताओं के दमन–उत्पीड़न को सामाजिक समर्थन मुख्यतः पूंजीपति वर्ग के इतर अन्य वर्गों, तबकों से यहीं से हासिल होता है।

हिन्दी भाषी क्योंकि एक राष्ट्रीयता नहीं बनते हैं इसलिए यह स्थिति तो भारत में नहीं है कि यह राष्ट्रीयता अन्य राष्ट्रीयताओं का दमन–उत्पीड़न करती हो परन्तु यह भाषायी समूह अपने विशाल आकार, राजनैतिक हस्तक्षेप की विशाल सामर्थ्य (इन इलाकों से ही सर्वाधिक सांसद, मंत्री होते हैं तथा प्रमुख संसदीय पार्टियों का यहां मुख्य आधार है), सेना–अर्द्धसैनिक बलों में इनकी विशाल मौजूदगी, केन्द्रीय नौकरशाही में इनके प्रभुत्व, सांस्कृतिक आधिपत्य ;ीमहमउवदलद्ध (हिन्दी फिल्में, रेडियो–टेलीविजन आदि के प्रोग्रामों में), आदि वजहों से भारत में मौजूद अन्य राष्ट्रीयताओं पर वरीयता हासिल करता है। हिन्दी भाषी तत्व भारतीय शासक वर्ग के दमन व उत्पीड़न के मूल औजार ;जववसद्ध बन जाते हैं, यद्यपि इस आबादी का मेहनतकश हिस्सा स्वयं भारतीय शासक वर्ग के शोषण, उत्पीड़न व दमन का शिकार है। कश्मीर तथा उत्तरपूर्वी राज्यों में गरीब मेहनतकश मजदूर अक्सर ही भारतीय शासक वर्ग तथा उसकी सेनाओं के खिलाफ मौजूद घृणा व आक्रोश के कारण सशस्त्र गुटों के आसान निशाने बन जाते हैं।

भारतीय शासक वर्ग ने अपने दायरे में इस समस्या के समाधान के लिए आर्थिक प्रक्रियाओं के साथ–साथ राजनैतिक व संवैधानिक प्रक्रियायें भी चलायी हैं। सत्ता संभालने के तुरन्त बाद भारतीय शासक वर्ग ने नये प्रांतों का गठन नहीं करने का फैसला लिया था। जन दबाव के बढ़ते जाने पर 1955 में राज्य पुनर्गठन आयोग की रिपोर्ट पर नये भाषावार प्रांतों का गठन किया गया। भारतीय शासक वर्ग राष्ट्रीयता के आन्दोलनों का क्रूरतापूर्वक दमन करता रहा है। अलग पंजाबी सूबे की मांग पर तो तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू ने गृहयुद्ध तक की धमकी दे डाली थी। जबरदस्त आन्दोलन के बाद ही 1966 में पंजाब राज्य का

निर्माण हुआ। यह भारतीय शासक वर्ग की सीमा थी। इससे आगे जाने के लिए वह कभी तैयार नहीं हुआ। उत्तरपूर्व में उभरती राष्ट्रीयताओं के आन्दोलन के दबाव में भारतीय शासक वर्ग ने असम से काटकर 1963 में नागालैंड, 1972 में मेघालय, 1987 में मिजोरम का गठन किया। 1972 में त्रिपुरा व मणिपुर को केन्द्र शासित प्रदेश से पूर्णराज्य का दर्जा दिया। इसी तरह नब्बे के दशक में व्यापक जनआन्दोलनों के कारण नये प्रांतों (उत्तरांचल, झारखंड, छत्तीसगढ़) के गठन के लिए भारतीय शासक वर्ग मजबूर हुआ।

प्रांतों के भीतर चलने वाले उप–राष्ट्रीयताओं (बोडो, गोरखा) के आन्दोलनों को तुष्ट करने के लिए नब्बे के दशक में इन प्रांतों में विभिन्न स्वायत्तशासी क्षेत्र (जिनके पास शिक्षा जैसे विषयों पर मामूली अधिकार है) गठित किये। कुल मिलाकर, ऐसे राजनीतिक–संवैधानिक प्रयास, भारतीय शासक वर्ग इन आन्दोलनों की धार को कुन्द करने व उन्हें अपनी व्यवस्था में आत्मसात करने के लिये ही करता रहा है।

III

वर्तमान युग, जिसे पूंजीवाद के विकास की उच्चतम मंजिल साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांतियों की पूर्वबेला के रूप में चिह्नित किया जाता रहा है, में भारत के संदर्भ में इस सवाल कें दो आयाम बन जाते हैं। पहला यह कि भारत की साम्राज्यवाद से मुक्ति कैसे संभव होगी तथा वर्तमान में वह साम्राज्यवाद से किन व किस तरह के सम्बन्धों में बंधा हुआ है साथ ही भारत में क्रांति के चरित्र में हाल के दशकों में क्या परिवर्तन आ गये हैं। दूसरा आयाम इस सवाल का इस बात से जुड़ा हुआ है कि भारत जो कि स्वयं 'राष्ट्रीयताओं की जेल' के रूप में चिह्नित किया जाता रहा है, का साम्राज्यवाद से क्या सम्बन्ध है तथा भारत की साम्राज्यवाद से मुक्ति कैसे होगी। भारत में होने वाली क्रांति का राष्ट्रीयताओं के मुक्ति के सवाल से क्या सम्बन्ध है या भारत के सर्वहारा के नेतृत्व में होने वाली क्रांति इस सवाल को कैसे हल करेगी।

इस सवाल के पहले आयाम पर हम कुछ सामान्य बातों को दोहराने तक ही अपने को सीमित रखेंगे। दूसरे आयाम पर हम अवश्य कुछ चर्चा करेंगे।

भारत, साम्राज्यवाद से आर्थिक नव औपनिवेशिक सम्बन्धों में बंधा हुआ है। इस संदर्भ में इस बात का अर्थ है कि भारत मूलतः राजनीतिक रूप से एक स्वतंत्र देश है। इसका अर्थ यह नहीं है कि भारत पर साम्राज्यवाद का राजनीतिक दबाव समाप्त हो गया है। साम्राज्यवाद भारत का शोषण आर्थिक तौर–तरीकों से ही मूलतः कर रहा है। इन अर्थों में साम्राज्यवाद से मुक्ति का सवाल बना हुआ है। साम्राज्यवाद से मुक्ति, वर्तमान भारतीय शासक वर्ग जो कि भारत में साम्राज्यवाद का सामाजिक अवलम्ब है, के खिलाफ, सर्वहारा के नेतृत्व में होने वाली सर्वहारा क्रांति के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुआ है। भारत में क्रांति की मंजिल, किसान क्रांति अर्थात नवजनवादी के स्थान पर सर्वहारा अर्थात समाजवादी क्रांति की हो गयी है।

भारतीय शासक वर्ग प्रतिक्रियावादी चरित्र का है। पिछड़े मूल्य–मान्यताओं, पितृसत्तात्मक– सामंती मूल्यों को यह अपने हितों में इस्तेमाल करता है और इसके तहत यह मेहनतकश जनता की जनवादी

आकांक्षाओं का निरंतर दमन करता है। भारतीय जनता को अपने जनवादी अधिकारों के लिए इंच–इंच संघर्ष करना पड़ा है। भारतीय पूंजीवाद तथा बुर्जुआ संविधान के दायरे के अधिकार भी जनता तभी हासिल कर सकी है जब उसने उनकी प्राप्ति के लिए कठिन लड़ाइयां लड़ी हैं। पचास व साठ के दशक में भाषावार प्रांत का गठन तीखे जन संघर्षों के बाद ही हो सका था। उसके बाद गठित नये प्रांतों के लिए भी जनता को सड़कों पर उतरना पड़ा है तथा लाठी–गोली खानी पड़ी है। भारतीय संविधान आत्मनिर्णय के अधिकार को मान्यता नहीं देता है। यह इसके जनवाद की सीमा को व्यक्त कर देता है। आत्मनिर्णय के अधिकार तथा अलग हो सकने के जनवादी अधिकार के बिना गठित भारतीय संघ नाम मात्र का ही संघ है। पुलिस, सेना, काले कानूनों की मदद से यह सभी संघर्षरत राष्ट्रीयताओं का घोर दमन करता रहा है। सभी राष्ट्रीयताओं के मेहनतकश भारतीय पूंजी की गुलामी में जकड़े हुए हैं। भारतीय पूंजी के मार्फत ही साम्राज्यवादी पूंजी भारत के सर्वहारा तथा अन्य मेहनतकशों का शोषण करती है।

साम्राज्यवाद भारतीय राज्य के भीतर चलने वाले राष्ट्रीयताओं के आन्दोलनों का इस्तेमाल भारतीय शासक वर्ग पर दबाव बनाने, कुछ लाभ हासिल करने तथा भारत को अपने प्रभाव क्षेत्र में बनाये रखने के लिये करता है। कश्मीर, नागालैंड, असम में चलने वाले आन्दोलनों में वह एक भूमिका चाहता रहा है। कश्मीर में हस्तक्षेप के लिए साम्राज्यवाद विशेषकर अमेरिकी साम्राज्यवाद अनुकूल अवसर की तलाश में रहता है। भारतीय शासक वर्ग के साम्राज्यवाद के साथ सम्बन्धों तथा अन्यान्य कारणों के चलते साम्राज्यवाद सीधे दखल से बचता रहा है।

भारत के क्रांतिकारी आन्दोलन में विभिन्न राष्ट्रीयताओं के आन्दोलनों को साम्राज्यवाद के षड्यंत्र के रूप में देखने की एक गलत प्रवृत्ति रही है। यद्यपि यह प्रवृत्ति भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन के एक छोटे हिस्से की ही रही है। परन्तु यह गलत है। भारत में चलने वाले विभिन्न राष्ट्रीयताओं के आन्दोलन, इन राष्ट्रीयताओं की जनवादी आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति हैं यद्यपि ये तमाम किस्म की निम्न पूंजीवादी प्रवृत्तियों के शिकार रहे हैं।

ये निम्न पूंजीवादी प्रवृत्तियां साम्राज्यवाद के सवाल पर भी दिखायी देती हैं। विभिन्न राष्ट्रीयताओं के आन्दोलनों में यह एक बुनियादी कमजोरी दिखायी देती है कि वे साम्राज्यवाद विरोधी कार्यभारों को अपने आन्दोलन का हिस्सा कमोबेश नहीं बनाते हैं। विभिन्न साम्राज्यवादी संस्थाओं यथा संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा इसके विभिन्न अनुषंगी संगठनों को, ये सकारात्मक रूप से देखते रहे हैं तथा भारतीय शासक वर्ग के खिलाफ उनसे हस्तक्षेप की अपील, उम्मीद करते रहे हैं। कई संघर्षशील संगठन साम्राज्यवादी वैश्वीकरण की मौजूदा प्रक्रिया को भी सकारात्मक ढंग से लेते रहे हैं। इसे साम्राज्यवादी आक्रमण के स्थान पर वे एक व्यापक जनवादीकरण की प्रक्रिया के रूप में देखते रहे हैं। वे वैश्विक गांव के झूठे प्रचार के जाल में फंसते रहे है। ये सब राष्ट्रीयताओं के आन्दोलन में निम्न पूंजीवादी प्रवृत्ति की अभिव्यक्तियां हैं।

ऐसे ही निम्न पूंजीवादी प्रवृत्ति की एक अन्य अभिव्यक्ति तब होती हैं जब कोई संघर्षरत राष्ट्रीयता अन्य राष्ट्रीयताओं के और विशेषकर हिन्दी क्षेत्र के आम मेहनतकशों व मजदूरों के प्रति वैमनस्य भरा रुख अपनाती है। शासक वर्ग और शासित वर्ग को एक ही खेमे में रखने से, संघर्षरत संगठन अपने स्वाभाविक

दोस्तों का समर्थन व सहयोग खो देते हैं। नृशंस हत्यायें व अन्य आतंकवादी घटनायें निम्न पूंजीवादी प्रवृत्ति की ही अभिव्यक्तियां हैं।

साम्राज्यवाद और भारतीय पूंजीवाद से मुक्ति का प्रश्न भारत की सभी राष्ट्रीयताओं के समक्ष है। सर्वहारा के नेतृत्व में होने वाली समाजवादी क्रांति ही इस सवाल को मुकम्मिल तौर पर हल कर सकती है।

IV

इस अन्तिम अनुभाग में हम इस सवाल को लेंगे कि भारत में राष्ट्रीयता के सवाल पर सर्वहारा नीति क्या होनी चाहिए।

राष्ट्रीयता के सवाल पर लेनिन ने अपनी कृतियों 'जातियों का आत्मनिर्णय का अधिकार', 'जातीय प्रश्न पर आलोचनात्मक टीकाएं' तथा 'समाजवादी क्रांति तथा जातियों का आत्मनिर्णय का अधिकार (प्रस्थापनाएं)' में बहुत ही सारगर्भित ढंग से अपने विचार व्यक्त किये हैं। भारत में राष्ट्रीयता के सवाल पर लेनिन की प्रस्थापनाएं हमारी पथ प्रदर्शक हैं।

सर्वहारा नीति के अनुसार कम्युनिस्ट हर तरह के राष्ट्रीयता के आन्दोलन का समर्थन नहीं करते हैं। उन्हीं आन्दोलनों का समर्थन करते हैं जो सर्वहारा के आम उद्देश्य के लिए जनवाद का विस्तार करते हों और उनकी भावी और स्वाभाविक एकता को सुनिश्चित करते हों। सर्वहारा वर्ग ऐसा इसलिए करता है ताकि 'वर्ग संघर्ष के लिए श्रेष्ठतम परिस्थितियां' उत्पन्न हो सकें। कुल मिलाकर, राष्ट्रीयता के आंदोलन के समर्थन का सवाल वर्ग संघर्ष के मातहत है। इस आधार पर देखा जाय तो भारत में सर्वहारा नीति धार्मिक आधार पर अलग राष्ट्र की मांग का हर सूरत में विराध करेगी। खालिस्तानी आन्दोलन एक प्रतिक्रियावादी आन्दोलन था। अस्सी के दशक में कई कम्युनिस्ट ग्रुपों ने इसी नीति के आधार पर इस आन्दोलन का जोरदार विरोध किया था तथा कई कम्युनिस्ट इस कारण शहीद हुये थे। कतिपय ग्रुपों ने इस नीति से विचलन भी दिखाया था।

भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में इस सवाल पर, पिछली सदी के चालीस के दशक में, गम्भीर उलझाव रहा है। सुविचारित नीति से तत्कालीन कम्युनिस्ट नेतृत्व ने भटक कर पाकिस्तान बनाये जाने का समर्थन कर, अपने को ब्रिटिश साम्राज्यवादियों तथा भारतीय उपमहाद्वीप के सम्पत्तिशाली वर्गों तथा बुर्जुआ वर्ग के हितों के सामने झुकने दिया। सर्वहारा वर्ग के स्थान पर प्रतिक्रियावादी वर्गों के उद्देश्यों व हितों की वस्तुगत तौर पर सेवा की। धर्म के आधार पर निर्मित की गई छद्म राष्ट्रीयता से बंगाली, पंजाबी, सिन्धी व कश्मीरी राष्ट्रीयताओं का कृत्रिम विभाजन हो गया। भारत–पाकिस्तान विभाजन में भारी पैमाने पर आबादी का विस्थापन हुआ। साम्प्रदायिक दंगों में हजारों लोग मारे गये।

उपरोक्त सर्वहारा नीति के अनुरूप ही राष्ट्रीयताओं के आत्मनिर्णय तथा अलग होने के अधिकार का समर्थन किया जा सकता है। वर्तमान भारतीय राज्य के स्थान पर स्थापित होने वाला सर्वहारा राज्य ही

सभी राष्ट्रीयताओं, उप–राष्ट्रीयताओं, विभिन्न भाषायी–उपभाषायी समूहों की भाषा, संस्कृति के पनपने के पूर्ण अवसर प्रदान कर सकता है। यह सब लेकिन किसी एक राष्ट्रीयता की कीमत पर दूसरी राष्ट्रीयता को अवसर प्रदान करने के रूप में नहीं होगा। किसी भी राष्ट्रीयता और भाषा को कोई विशेषाधिकार नहीं प्राप्त होंगे। सर्वहारा राज्य इस बात की गारंटी करेगा कि किसी भी राष्ट्रीयता का उत्पीड़न न हो तथा इसकी भौतिक जमीन के समाप्त होते ही इसके अधिरचना में मौजूद तत्वों की समाप्ति हो। सभी राष्ट्रीयताओं और उनकी संस्कृति के आपसी एकीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का प्रयास, ऐसा सर्वहारा राज्य करेगा। सभी किस्म के राष्ट्रीय भेदों व अवरोधों को समाप्त करने का प्रयास, सर्वहारा राज्य को करना होगा।

मार्क्सवाद, राष्ट्रवाद के सभी प्रकारों चाहे वह बुर्जुआ राष्ट्रवाद हो या निम्न पूंजीपति वर्ग का राष्ट्रवाद हो, के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीयतावाद रखता है तथा इस कारण से वह दोनों ही उत्पीड़क वर्ग और उत्पीड़ित वर्ग के राष्ट्रवादी भटकावों के खिलाफ निरंतर संघर्ष करता है। भारत में कतिपय क्रांतिकारी संगठन विभिन्न राष्ट्रीयताओं के संघर्ष में मौजूद राष्ट्रीय भटकाववादी प्रवृत्तियों की आलोचना नहीं करते हैं तथा इस कारण से उनका इन राष्ट्रीयताओं को समर्थन बिना शर्त हो जाता है, जो कि गलत है। जैसा कि लेनिन ने हमें सिखाया है कि मार्क्सवाद, राष्ट्रवाद के सभी प्रकारों के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीयतावाद को, सारे राष्ट्रों के उच्चतर एकता के संलयन को सामने रखता है।

किसी राष्ट्रीयता की संस्कृति को मार्क्सवाद पवित्र और अनुल्लंघनीय नहीं मानता है। मार्क्सवाद के अनुसार प्रत्येक राष्ट्रीयता की संस्कृति में दो तरह की प्रवृत्तियां मौजूद होती है। ये दो तरह की प्रवृत्तियां अपने चरित्र व प्रकृति में वर्गीय अंतर्य से युक्त होती हैं। इन दो तरह की प्रवृत्तियों में से एक शासक वर्गीय मूल्यों से लैस होती है और दूसरी प्रवृत्ति में ऐसे अविकसित तत्व होते है जो सर्वहारा संस्कृति के अंग हो सकते हैं। सर्वहारा संस्कृति के अंग बनने वाले तत्वों के ध्वजवाहक आम मेहनतकश तथा ऐसे जन होते हैं जिनका निरंतर सर्वहाराकरण हो रहा होता है। भारत में विभिन्न राष्ट्रीयताओं, उप राष्ट्रीयताओं, भाषायी–उप भाषायी समूहों में भी इसी तरह से दो तरह की प्रवृत्तियां मौजूद हैं। पहली प्रवृत्ति से जहां भारत के शासक वर्ग की संस्कृति विकसित होती है तथा आधार विस्तृत होता है। विभिन्न राष्ट्रीयताओं के आत्मसातीकरण के दौरान भारत का शासक वर्ग इनकी मध्ययुगीन, पितृसत्तात्मक सामन्ती संस्कृति को अंगीकार कर अपनी 'अनेकता में एकता' नामक भारतीय संस्कृति में अक्सर महिमामंडित करता है। भारतीय शासक वर्ग के सापेक्ष सर्वहारा तथा मेहनतकशों की संस्कृति विकसित होती हुई संस्कृति है। आज भारत के सर्वहारा में अखिल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी तथा सर्वहारा के क्रांतिकारी आंदोलनों के अभाव के कारण भारत के शासक वर्ग की पतित सामंती व साम्राज्यवादी मूल्यों से लैस बुर्जुआ संस्कृति हावी है। सर्वहारा संस्कृति का विकास सर्वहारा राज्य में ही बेहतर ढंग से हो सकता है। यह सर्वहारा संस्कृति, भारत के सभी राष्ट्रीयताओं, उप–राष्ट्रीयताओं तथा अन्य भाषायी समूहों के सभी सर्वहारा संस्कृति के अंग बन सकने वाले तत्वों को अपने में समेट लेगी।

मार्क्सवाद सदैव से ही वृहत्तर राज्य का समर्थन करता है। पूंजीवाद अपने विकास के दौरान ऐसे वृहत्तर राज्यों का निर्माण करता है। ऐसे वृहत्तर राज्य ही इस बात की सम्भावना प्रस्तुत करते हैं कि बुर्जुआ वर्ग तथा सर्वहारा वर्ग मध्ययुगीन, स्थानीय, राष्ट्रीय, धार्मिक तथा अन्य किस्म के पुराने अवरोधों को तोड़कर

विशाल शिविरों में एकत्रित हो सकते है। पूंजीवाद अगर ऐसे वृहत्तर राज्य का निर्माण करता है तो यह उत्पादन शक्तियों के विकास की संभावना खोलता है। पूंजीवाद विशाल तथा केन्द्रीकृत राज्यों का निर्माण करता है। ऐसे राज्य समाजवाद के निर्माण तथा सर्वहारा वर्ग की एकता के लिये भौतिक जमीन का निर्माण करते हैं। सर्वहारा वर्ग ऐसे वृहत्तर राज्यों का स्वागत करेगा तथा ऐसे राज्यों के विकेन्द्रीकरण की मुखालफत करेगा।

मार्क्सवाद के अभीष्ट लक्ष्य संपूर्ण मानवजाति की समाजवादी एकता में ऐसे राज्य सहायक होंगे। इन अर्थों में मार्क्सवाद किसी किस्म के संघवाद अथवा विकेन्द्रीकरण के खिलाफ होता है।

परन्तु पूंजीवाद जहां ऐसे राज्यों का निर्माण व विकास करता है वहीं वह विभिन्न राष्ट्रीयताओं, जातियों के उत्पीड़न व शोषण को तीव्र कर देता हैं। उत्पीड़ित राष्ट्रीयतायें अपने आत्मनिर्णय तथा अलग होने के अधिकार के लिए संघर्ष छेड़ती है। तब मार्क्सवाद ऐसे उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के संघर्ष का इस शर्त के साथ समर्थन करता है कि यह वर्ग संघर्ष के मातहत हो तथा इससे सर्वहारा की स्वाभाविक व स्थायी एकता जन्म ले सके। यहां मार्क्सवाद ऐसे स्वतंत्र सर्वहारा राज्यों के ऐसे संघ की वकालत करता है जो जनतांत्रिक सिद्धान्त पर आधारित हो।

भारत के संदर्भ में हम जनतांत्रिक सिद्धान्त पर आधारित सर्वहारा राज्य के गठन का समर्थन करेंगे। यह एक संघ होगा। यह सर्वहारा राज्य सभी किस्म के राष्ट्रीय उत्पीड़न को समाप्त कर देगा। यह राज्य सभी राष्ट्रीय व भाषायी समूहों को समान अवसर प्रदान करेगा। यह इस बात को सुनिश्चित करेगा कि अखिल भारतीय स्तर पर स्वाभाविक व स्थायी एकता कायम हो सके। यह सर्वहारा राज्य मात्र उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के आत्मनिर्णय के अधिकार की वकालत करेगा तथा उन्हें संघीय अधिकार प्रदान करेगा। सर्वहारा राज्य जिन प्रांतों की जनता का आपसी एकीकरण वर्तमान राज्य के भीतर ही हो गया है, के अलग होने की किसी भी प्रवृत्ति का विरोध करेगा।